"महर्षि दयानंद सरस्वती के शैक्षिक विचारों की वर्तमान युग में प्रासंगिकता।"

डॉ. मधु सिंगला

सहायक प्रवक्ता (हिंदी विभाग)

अग्रवाल महाविद्यालय बल्लभगढ़ फरीदाबाद।

सम्बद्ध – महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय रोहतक

मेल आई डी– madhugoyal3183@gmail.com

सारांश–

महर्षि दयानंद सरस्वती जी का शिक्षा के क्षेत्र में योगदान अतुल्य रहा है। अपनी पुस्तकों में उन्होंने शिक्षा के लिए माता–पिता एवं शिक्षक की भूमिका को सर्वोपरि माना है और शिक्षा में चरित्र निर्माण तथा नैतिक मूल्यों को प्राथमिकता दी है। नारी को समाज का आधार मानते हुए उन्होंने सर्वांगीण विकास के लिए पारिवारिक एवं सामाजिक शिक्षा को आवश्यक माना। उनके अनुसार शिक्षा में समानता का भाव अनिवार्य होना चाहिए तथा बालक की शिक्षा चाहे औपचारिक हो या अनौपचारिक उसमें अनुशासन का भाव निहित हो साथ ही आवश्यकता होने पर दंड का प्रावधान भी होना चाहिए। इसके अभाव में बालक अनुशासित मानसिक रूप से मजबूत नहीं हो पाता। चन्द प्रतिकूल परिस्थितियों में वह सामंजस्य नहीं कर पाता। वर्तमान स्थिति को देखा जाए तो जिस प्रकार से परिवार एकल होते जा रहे हैं,अभिभावक कामकाजी होने के कारण व्यस्त हैं। डिजिटल युग में तकनीकी सुविधाओं ने बालक को शिक्षित तो किया है परंतु युवा पीढ़ी में अतिशय बौद्धिकता, ब्रह्मचर्य पालन की अवमानना तथा प्रतिस्पर्धात्मक प्रवृत्ति के कारण मानसिक अवसाद और शारीरिक असक्षमता अधिक होने लगी है। "वेदों की ओर लौटो"नारा देने वाले सरस्वती जी ने स्वस्थ भारत की परिकल्पना में अपनी संस्कृति को सर्वोपरि माना और उनके द्वारा दिए गए विचार आज भी पूर्णरूपरेण प्रासंगिक हैं।

प्रस्तावना–

मानव– समाज को व्यवस्थित रूप प्रदान करने में शिक्षा की अहम भूमिका है। यह ऐसी सामाजिक प्रक्रिया है जिससे व्यक्ति का व्यक्तित्व, ज्ञान एवं कौशल विकास को प्राप्त करता है और स्वस्थ समाज का निर्माण कर राष्ट्र को सशक्त बनाने में योगदान देता है। व्यक्ति जन्म से लेकर मृत्युपर्यंत अर्थात आजीवन

कुछ–न–कुछ ग्रहण करता है। कभी अनुभवों द्वारा तो कभी औपचारिक शिक्षा द्वारा। मानव के सर्वांगीण विकास में औपचारिक और अनौपचारिक शिक्षा समान रूप से कार्य करती है। परिवार के मध्य रहते जहां एक ओर बालक नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण अनौपचारिक शिक्षा ग्रहण करता है वहीं दूसरी ओर अतिरिक्त ज्ञानार्जन और व्यक्तित्व विकास के लिए वह अनौपचारिक शिक्षा विद्यालय, महाविद्यालय अथवा किसी विशेष तकनीकी संस्थान द्वारा प्राप्त करता है। भारतीय ज्ञान परंपरा की अवधारणा सदा से ही मानवीय मूल्यों को पोषित करती रही है। उसकी स्मृद्धि और व्यापकता पाश्चात्य साहित्यकारों के मध्य भी जिज्ञासा एवं कौतूहल का विषय बनी रही है।देवभूमि भारत की धरती पर अनेकों ऐसे मनीषियों ने जन्म लिया है जिनका शिक्षा के क्षेत्र में योगदान अतुल्य रहा है। जिन्होंने शिक्षा को नई दिशा प्रदान करने में सार्थक भूमिका का निर्वाह किया है। ऐसी ही महान विभूति के रूप में 12 फरवरी 1824 को गुजरात के टंकारा जिले में जन्मे दयानंद सरस्वती जी जिनका वास्तविक नाम मूल शंकर था। आर्य समाज के संस्थापक दयानंद सरस्वती जी ने स्वामी विरजानंद जी से धार्मिक शिक्षा ग्रहण कर अपनी जिज्ञासु प्रवृत्ति को अर्थ प्रदान किया। आर्य समाज की स्थापना का उद्देश्य भी मूल रूप से हिंदू धर्म में आई अंधविश्वासी प्रवृत्ति को हटाकर नैतिकता की भावना का समावेश करना था। उनका मानना था कि वास्तविक ज्ञान का अभाव व्यक्ति को पथभ्रष्ट कर देता है। अतः वास्तविक शिक्षा वही है जो समाज में परिवर्तन और प्रगति लाए।

"दयानंद जी ने शिक्षा की परिभाषा को स्पष्ट करते हुए कहा कि शिक्षा वह है जिससे विद्या, सभ्यता, धर्मात्मा, जितेंद्रियादि की बढ़ोतरी हो और अविद्या आदि दोष छुटे उसको शिक्षा कहते हैं जिससे मनुष्य विद्या आदि शुभ गुणों की प्राप्ति और अविद्या आदि दोषों को छोड़कर सदा आनंदित हो सके वह शिक्षा कहलाती है।"1

दयानंद सरस्वती जी सार्वभौमिक शिक्षा को महत्वपूर्ण मानते हैं और उनका मानना रहा है कि व्यक्ति को वेदों एवं शास्त्रों का अध्ययन कर अपने मौलिक विचार एवं मूल्यों को बनाना चाहिए जो समाज हितकारी हों, परंतु यह भी ध्यान रखना चाहिए कि इसमें बाध्यता का अभाव हो अर्थात व्यक्ति को अपने आचार–विचार किसी पर थोपने नहीं चाहिए। उन्होंने मानव–जीवन का लक्ष्य चरित्र– निर्माण को माना है। अतः व्यक्ति को चाहिए कि वह संतों की संगति को अपनाए। ज्ञान और भक्ति का समन्वय जीवन की अनिवार्य शर्त है किसी एक के भी अभाव में जीवन की सार्थकता संभव नहीं है। प्रासंगिकता की दृष्टिकोण से देखा जाए तो आधुनिक युवा पीढ़ी में बौद्धिकता का प्रभाव अधिक दिखाई देता है। वास्तविक ज्ञान के अभाव में अध्यात्म और विज्ञान के बीच फंसे युवा की निर्णायक क्षमता वह नहीं है जो होनी चाहिए। अतः सरस्वती जी की वाणी सर्वथा उचित है कि व्यक्ति में विवेक और सात्विक ज्ञान के लिए समन्वयात्मक एवं आध्यात्मिक शिक्षा अत्यधिक आवश्यक है ।

स्वामी जी के विचार "भक्ति में शक्ति"की तर्ज को पूर्णता प्रदान करते हैं। उनका मानना था कि आवश्यक नहीं कि केवल मंदिरों में जाकर ही ईश्वर का भजन–भक्ति किया जाए, बल्कि माता–पिता के सानिध्य में प्राप्त अनौपचारिक शिक्षा को ही सही यदि मायने में ग्रहण कर लिया जाए तो उसे भी ईश्वरीय ज्ञान ही समझना चाहिए।वर्तमान में यह स्थिति संतोषजनक कम दिखाई देती है। बढ़ते एकांकी परिवार और पारिवारिक– विघटन की समस्याओं का कारण अभिभावकों की व्यस्ततम जीवन–शैली है। जिसके कारण बालक वह शिक्षा ग्रहण नहीं कर पा रहा जो उसमें आदर्श का निर्माण कर सके। भौतिकता की चकाचौंध में स्वार्थ के वशीभूत हुआ व्यक्ति उस आदर्शवादी, नैतिकतापूर्ण अनौपचारिक शिक्षा को भुला बैठा है जो उसे माता–पिता के रूप में बालक जीवन के आरंभिक वर्षों में उसे देनी चाहिए थी। ऐसी तप्त स्थिति में सरस्वती जी की वाणी शीतलता प्रदान करती प्रतीत होती है। शिक्षा के संदर्भ में दयानंद जी के विचारों में विशेष रूप से उल्लेखनीय यह है कि चरित्र– निर्माण के समय यदि बालक को कठोर दंड भी देना हो तो वह भी निसंकोच देना चाहिए। ये दंड रूपी औषधि जीवन के संघर्षों से लड़ने की क्षमता प्रदान करते हैं।अनुशासित जीवन के लिए बालक की शिक्षा में थोड़ी कठोरता, दंड का प्रावधान और परिस्थिति–अनुकूलन की क्षमता होना अत्यावश्यक है। वैसे तो शिक्षा का संबंध किसी विशेष आयु–वर्ग या वर्ण से नहीं है परंतु राष्ट्र–कल्याण में युवाओं की भूमिका अहम होती है। अतः आवश्यक है कि बालक को आरंभ से ही इस प्रकार की शिक्षा दी जाए कि कर्तव्य–विमुखता,आज्ञा–अनुपालना होने पर कठोर निर्णय एवं दंड की व्यवस्था हो। प्रायः देखा जाता है कि आजकल माता–पिता की इकलौती संतान में निर्णायक क्षमता में कमी, संघर्षों का अभाव और अनुशासित जीवन का न होने जैसी प्रवृत्ति अधिक है और संभव है कि इसलिए युवा वर्ग में मानसिक अवसाद बढ़ते जा रहे हों। बाल्यावस्था का वह बालक जो कच्ची मिट्टी के समान होता है यदि आरंभ से ही उसके पालन–पोषण में कुछ कठोरता रखी जाए तो ऐसे बालक आने वाले समय में स्वस्थ समाज बनाने में योगदान दे सकते हैं क्योंकि वे कठिन परिस्थितियों से लड़ने में सक्षम हो जाते हैं।वर्तमान में जिस प्रकार की परिस्थितिया हैं उसके लिए आवश्यक है कि शिक्षा कुछ इस प्रकार से दी जाए कि बालक का मानसिक विकास मजबूती के साथ हो। ऐसे में दयानंद जी के विचार बिल्कुल तर्कसंगत प्रतीत होते हैं। औपचारिक शिक्षा के संबंध में भी उनके विचार समानता की अवधारणा को प्रकट करते हैं। सभी के लिए समान खान–पान, पुस्तके एवं आसान की व्यवस्था से वे असमानता के भाव को हटाना चाहते थे।

"स्वामी जी के विचार अनुसार – बालक को शिक्षा भावी जीवन को सुंदर एवं सुखमय बनाने के लिए दी जाती है। शिक्षा का प्रयोग इसी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए होता है। तैयारी करना और तैयार रहना शिक्षा का सार है। व्यक्ति के चरित्र का निर्माण जीवनोपयोगी व्यवसाय में निपुणता प्राप्त करना, परंपरागत धार्मिक एवं संस्थागत रीति–रिवाजों और विचारों को बनाए रखना ये शिक्षा के कार्य हैं।"2

स्वामी जी के अनुसार शिक्षा का लक्ष्य केवल नौकरी प्राप्त करना या व्यवसाय करना नहीं है बल्कि जीविका उपार्जन के साथ–साथ राष्ट्र निर्माण में सहायक होना भी है। जो माता–पिता संतान को केवल धन संपत्ति आदि देकर जीवन की इति श्री समझ लेते हैं वे निश्चय ही पाप के भागीदार हो जाते हैं। इसलिए जरूरी है कि अभिभावक मित्रवत व्यवहार द्वारा बालक को समय–समय पर नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण शिक्षा दें।

"स्वामी दयानंद सरस्वती जी का प्रमुख उद्देश्य था कि शिक्षा प्रणाली के साथ–साथ विद्यार्थी के व्यक्तित्व का निर्माण भी होना चाहिए। स्व किताबों का चुनाव करते हुए समय विशेष की पहचान करना क्योंकि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालकों के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करना है। स्वामी जी की मान्यता थी विद्यार्थियों को संस्कृत व मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भाषाओं का अध्ययन भी करवाना था। शास्त्र शिक्षण के साथ–साथ छात्रों को कला कौशल का भी ज्ञान देना चाहिए ताकि भावी जीवन में जीविकोपार्जन कर सकें।"3

स्वामी जी ने ब्रह्मचर्य व्रत पालन को शिक्षा का अभिन्न अंग माना है। ऐसा नहीं है कि जिस समय स्वामी जी का आगमन हुआ उस समय समाज में वर्ग और वर्ण व्यवस्था नहीं थी। उस समय में भी थी और देखा जाए तो कहीं न कहीं आज भी है, केवल स्वरूप में परिवर्तन है। शिक्षा के क्षेत्र में सरस्वती जी ने नारी शिक्षा को भी अत्यधिक महत्व दिया है। उनके अनुसार एक शिक्षित नारी पूरे परिवार को शिक्षित करने में सराहनीय भूमिका निभाती है। वह समाज का अभिन्न अंग है।

"स्वामी जी ने सबके लिए शिक्षा की अनिवार्यता सिद्ध करते हुए "सत्यार्थ प्रकाश" के तीसरे समुल्लास में लिखा है इसमें राज नियम और जाति नियम होना चाहिए कि अपने पांचवें और आठवें वर्ष से आगे कोई अपने लड़के लड़कियों को घर पर न रख सके पाठशाला में अवश्य भेज देवें और जो ना भेजें वह दंडनीय हो। स्त्रियों को सभी प्रकार के ज्ञान की आवश्यकता पर बल देते हुए वे लिखते हैं जैसे पुरुषों को व्याकरण, धर्म की विद्या न्यून से न्यून अवश्य पढ़नी चाहिए वैसे स्त्रियों को भी व्याकरण, धर्म, वैद्यक, गणित, शिल्प विद्या तो अवश्य ही सीखनी चाहिए।"4

आज भी देश के व्यापक हिस्से में नारी शिक्षा को महत्व नहीं दिया जाता जोकि देना चाहिए। ग्रामीण एवं पिछड़े क्षेत्रों में आज भी नारी को मात्र घर के कामकाज के लिए समझा जाता है। ऐसे में उनके विचार समाज में नई स्थिति एवं नारी शिक्षा उत्थान के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। वैज्ञानिक एवं मशीनी युग में बुद्धिवाद की प्रतिष्ठा होना, एकांकी परिवार की अवधारणा, मनुष्य का भौतिक संसाधनों का दास होते जाना

, शिक्षा का व्यवसायीकरण और युवा पीढ़ी की पथभ्रष्टता को हटाने के लिए सरस्वती जी के विचार महत्वपूर्ण एवं प्रासंगिक हैं।

निष्कर्ष–

शिक्षा मानव जीवन का अभिन्न अंग है। देवभूमि भारत में वास्तविक ज्ञान का खजाना वेदों में छिपा है। युग परिवर्तन के अनुसार औपचारिक और अनौपचारिक शिक्षा का स्वरूप परिवर्तित होता रहा है।

भारत सरकार द्वारा चलाई गई मुहीम "वेदों की ओर लौटो" ने आधुनिक समय में शिक्षा के क्षेत्र में आई विसंगतियां की ओर ध्यान आकृष्ट किया है।आधुनिक युग के डिजिटल शिक्षा ने बालक को शिक्षित तो किया है परंतु युवा पीढ़ी में अतिशय बौद्धिकता, ब्रह्मचर्य पालन की अवमानना तथा प्रतिस्पर्धात्मक प्रवृत्ति के कारण मानसिक अवसाद और शारीरिक और अक्षमता अधिक होने लगी है। ऐसे में वेदों की ओर लौटो का नारा देने वाले भारत की महान विभूति दयानंद सरस्वती जी की शिक्षाएं पूर्णरूपेण प्रासंगिक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. प्रतीक त्रिपाठी, स्वामी दयानंद सरस्वती के शैक्षिक दर्शन का वर्तमान शिक्षा में योगदान, जनरल आफ इमर्जिंग टेक्नोलॉजी एंड इन्नोवेटिव रिसर्च, अप्रैल –2021, इश्यू– 4, (637)
2. डॉ संगीता सिंह, स्वामी दयानंद सरस्वती के शैक्षिक विचारों की वर्तमान युग में उपादेयता, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ साइंटिफिक रिसर्च इन साइंस एंड टेक्नोलॉजी, वॉल्यूम– 4, इश्यू – 2, पृष्ठ संख्या – 1630
3. रामकृष्ण शर्मा, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ क्रिएटिव रिसर्च थॉट्स, जुलाई – 2022, इश्यू – 7, वॉल्यूम –10, पृष्ठ संख्या–1254
4. डॉ संगीता सिंह, स्वामी दयानंद सरस्वती के शैक्षिक विचारों की वर्तमान युग में उपादेयता, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ साइंटिफिक रिसर्च इन साइंस एंड टेक्नोलॉजी, वॉल्यूम– 4, इश्यू – 2, पृष्ठ संख्या – 1631

Copyright & License:

© Authors retain the copyright of this article. This work is published under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0), permitting unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.